अनुसन्धान प्रवाह Anusandhan Pravah
(An Open Access, Peer Reviewed, Multidisciplinary, Bilingual, E-Journal)
ISSN: 3108-1541
Vol.2, Issue 1,Year 2025, pp.117-129
URL : https://journal.sskhannagirlsdc.ac.in/

श्रीप्रकाश शुक्ल का बनारस: निरंतरता और परिवर्तन के बीच का काव्य-संसार

शिवम यादव
शोध छात्र, हिंदी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,वाराणसी-221005

सारांश:

काशी, जिसे बनारस या वाराणसी के नाम से भी जाना जाता है, भारतीय सभ्यता की एक अनादि और बहुआयामी नगरी है। अपनी ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पहचान के कारण यह सदियों से साहित्यिक अभिव्यक्ति का केन्द्र रही है। हिन्दी कविता परम्परा में भक्तिकाल से लेकर आधुनिक काल तक बनारस निरन्तर कवियों की रचनात्मक चेतना में उपस्थित रहा है। इसी परम्परा में समकालीन हिन्दी कविता के महत्त्वपूर्ण कवि श्रीप्रकाश शुक्ल का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। लगभग दो दशकों से बनारस में रहते हुए उन्होंने इस नगर को केवल देखा ही नहीं, बल्कि अपने जीवन और कविता के माध्यम से उसे गहराई से जिया है।श्रीप्रकाश शुक्ल की कविताओं में बनारस एक भौगोलिक या धार्मिक नगर मात्र नहीं, बल्कि एक जीवंत लोक-संसार के रूप में उपस्थित होता है। उनकी रचनाओं में गंगा, घाट, मंदिर, मेले, त्यौहार और लोक-परम्पराएँ जितनी सहजता से आती हैं, उतनी ही तीव्रता से वे समकालीन बनारस के अंतर्विरोधों

Article Publication:
Published online on: 30/12/2025

Corresponding Author:
शिवम यादव
शोध छात्र, हिंदी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005
Email: shivamydv436@gmail.com

©S.S. Khanna Girls Degree College

Scan For Paper

को भी उजागर करती हैं। कवि भक्ति या महिमामंडन के बजाय लोक-दृष्टि को केंद्र में रखता है, जिससे उनकी कविताएँ शास्त्रीय मान्यताओं से संवाद और कई बार संघर्ष करती हुई दिखाई देती हैं। जनपदीय भाषा, साधारण पात्रों और हाशिये के लोगों की उपस्थिति उनकी कविता को विशेष प्रामाणिकता प्रदान करती है। इसके साथ ही, श्रीप्रकाश शुक्ल की कविताएँ विकास के नाम पर हो रहे पूँजीवादी हस्तक्षेपों, मॉल संस्कृति और छोटे व्यापारियों के विस्थापन की पीड़ा को भी संवेदनशील ढंग से अभिव्यक्त करती हैं। इस प्रकार, बनारस उनकी कविताओं में एक केंद्रीय संवेदना और सार-तत्व के रूप में उपस्थित है, जहाँ कवि और शहर एक-दूसरे के पूरक बन जाते हैं। यह अध्ययन श्रीप्रकाश शुक्ल की कविताओं में बनारस की सांस्कृतिक चेतना, लोक-पक्षधरता और समकालीन यथार्थ के बहुआयामी स्वरूप को रेखांकित करता है।

बीज-शब्द- *काशी, बनारस, सभ्यता, संस्कृति, लोक, शास्त्र, प्राचीनता, समकालीन, पूँजीवाद, विकासवाद, विरासत, आस्था।*

मुख्य-आलेख-

काशी, जिसे बनारस या वाराणसी नाम से भी जाना जाता है, एक अनादि नगरी है। अपनी प्राचीनता को अक्षुण्ण रखते हुए यह आज भी विश्व भर में 'सिरमौर' बनी हुई है। इसकी विशेषताओं के कारण ही इसे 'मिनी इंडिया' तक कहा जाता है। सदियों से इस भव्य और दिव्य नगरी पर अलग-अलग भाषाओं में लिखा जा रहा है। हिन्दी साहित्य में इस अद्भुत नगरी का वर्णन भक्तिकाल में कबीर, रैदास, तुलसी से शुरू हुआ, और आधुनिक कवियों में भारतेन्दु, प्रसाद, त्रिलोचन, श्रीकांत वर्मा, केदारनाथ सिंह तथा ज्ञानेन्द्रपति जैसे मुर्धन्य विद्वानों तक यह परम्परा जारी रही। इन सभी ने बनारस पर उत्कृष्ट कविताएं लिखीं हैं। इसी परम्परा में समकालीन हिन्दी कविता में कवि श्रीप्रकाश शुक्ल भी एक ऐसा नाम हैं, जिन्होंने बनारस को न सिर्फ जाना, बल्कि जिया भी है। लगभग दो दशकों से श्रीप्रकाश शुक्ल बनारस में रहते हुए दर्जनों कविताएं रच चुके हैं। उनके सात कविता संग्रह प्रकाशित हुए हैं, जिनमें 'बोली बात', 'ओरहन तथा अन्य कविताएं', 'रेत में आकृतियाँ', 'क्षीर सागर में नींद' तथा 'वाया नई सदी' प्रमुख हैं। इन संग्रहों में बनारस के लोक, उसकी शास्त्रीय मान्यताएं, परम्पराएं, सांस्कृतिक विरासत और बदलते बनारस का यथार्थवादी चित्रण प्रस्तुत होता है। यह बात बड़ी रोचक है कि बनारस पर इतनी गहराई से और इतनी मात्रा में कविताएं लिखने वाला कोई और कवि अभी तक

सामने नहीं आया। बनारस और हिन्दी कविता का प्रसंग आते ही, श्रीप्रकाश शुक्ल और उनकी कविताएं अनायास ही याद आ जाती हैं।

एक कवि और शहर के बीच यह गहरा संवाद, जहाँ शहर के तमाम पहलुओं पर कवि की अनवरत आवाजाही है, कवि-कर्म और शहर के एक-दूसरे के पूरक हो जाने जैसा है। श्रीप्रकाश की तमाम कविताओं में बनारस को लेकर ऐसा ही संबंध स्पष्ट दिखता है। दरअसल, श्रीप्रकाश जी की कविताएं बनारसी लोक और आस्था का जीवंत ब्यौरा प्रस्तुत करती हैं। युवा आलोचक डॉ. विंध्याचल यादव ने श्रीप्रकाश शुक्ल की चुनी हुई कविताओं के संकलन की भूमिका में यह दर्ज किया है कि 'बनारस उनकी काव्यचेतना में प्राणतत्व की तरह धड़क रहा है।'

'बुढ़वा मंगल' शीर्षक कविता महज एक त्यौहार का वर्णन नहीं हैं वरन जीवन के संचार का भी दिग्दर्शन है, जहाँ एक पुरानी पीढ़ी अपने हुनर से नई पीढ़ी का मार्ग प्रशस्त करती है। लोक का ऐसा साधा चित्र यह कविता अनायास ही जीवन के तमाम पहलुओं का सरोकार करा जाती है....

" यह बहुत दूर से चल कर बड़का मंगल की जो आवाज आ रही है

उसी बुढ़वा मंगल की आवाज है

जहाँ एक गुदाज़ गंगा के भीतर से उभरता हुआ

नयी पीढ़ी का उल्लास है

तो पुरानी पीढ़ी का हुनर

....

फागुन से चैत में छलाँग लगाता यह बुढ़वा मंगल

सबका मंगल है

जिसमें दिल की उलझी हुई तरंगे खिल जाती हैं

और बढ़ोत्तरी की उम्मीद लिए

एक पूरा जीवन बज उठता है। "[1]

कवि बड़का मंगल और बुढ़वा मंगल के बीच 'आवाज' को माध्यम बनाया है। दो पीढ़ियों के बीच आवाज एक सेतु का काम कर रही है। नयी पीढ़ी में दिख रहा उल्लास, अपनी पुरानी पीढ़ी के हुनर से ही सम्भव हुआ है। अर्थात

बुढ़वा मंगल, बढ़का मंगल के लिए एक विरासत के समान है। यह कविता भी यही बताती है कि, मनुष्य को अपनी विरासत की समझ होनी चाहिए। विरासत से सीखते हुए तथा उसे संरक्षित करने की जिम्मेदारी भी मनुष्य की ही है। नीचे की पंक्तियों में कवि ने एक माह से दूसरे माह के बीच होते परिवर्तनों में मंगल (शुभ होना) की बात की है। यह परिवर्तन लोक में उस मंगल का परिवर्तन है, जहाँ मनुष्य अपनी तमाम उलझनों के बावजूद एक नई उम्मीद लिए, जीवन की एक नई सुगंध के साथ आगे बढ़ जाता है।

श्रीप्रकाश शुक्ल की एक महत्वपूर्ण कविता 'अथ काशी प्रवेश' शीर्षक से है। जैसा कि शीर्षक में प्रवेश शब्द से ही समझ सकते हैं कि, किसी के आगमन जैसी बात हो रही है। और यह आगमन स्वयं कवि का ही आगमन है। कवि का आगमन ग़ालिब के काबा-ए-काशी की तरह नहीं होता बल्कि कवि का आगमन काशी के उस यथार्थ से हुआ जिसे कवि ने महसूस किया। उसने धूल और धुएँ के बीच काशी में 'लपकों' और 'गपकों' को फलते फूलते देखा। आशय यह कि, कवि ने काशी की तमाम छवियों को अपनी दृष्टि से ही देखा। इस संबंध में आलोचक कमलेश वर्मा लिखते हैं कि, " काशी के व्यक्तित्व में इतनी बहुरुपता है कि उसका सामान्यीकरण करने की कोशिश अधूरी रह जाती है। कवि का एक संकेत यह भी है कि काशी को अपनी निगाह से देखिये।"[2] और कवि अपने अनुभव के आधार पर ही पूरी कविता की निर्मिति करता है। राँड़, साँड़, सीढ़ी और संन्यासी को बनारस में चुनौतीपूर्ण तरीके से देखा जाता है। वे इस सूची में संन्यासी को जगह नहीं देते, उसके स्थान पर डाड़ को शामिल करते हैं। वे लिखते हैं-

" मैं जब कभी यहाँ से गुजरा
मैंने हमेशा महसूस किया है
कि राँड़ो, साँड़ो, व सीढ़ियों के इस सारस्वत प्रदेश में डाँड़ो की कोई भूमिका नहीं है
जबकि पूरे शहर को अपने ही कंधों पर उठाए
ये धाँगड़ लोग
पंडो व पुरोहितों से दिपदिपाते इस शहर को धार देते हैं और धाह भी! "[3]

डाड़ जिससे नाव चलती है, अर्थात मल्लाहों की भूमिका को कवि ने यहाँ रेखांकित किया है। एक ऐसे कटु सत्य को कवि यहाँ प्रस्तुत करता है, जिसकी वजह से काशी में गंगा इतनी सुगम बन पायी हैं, कि उसके महत्व को कभी समझा ही नहीं जा सका। चौरासी घाटों को पार कराने वाले मल्लाहों को भुलाकर काशी के महत्व को नहीं समझा जा सकता।

यह बड़ा ही रोचक है कि, इस शहर को लेकर यहाँ के लोगों के नजरिये को कवि ने बड़े ही स्पष्ट शब्दों में अभिव्यक्त किया है। कवि इस शहर को मरे हुए लोगों का शहर कहते हैं। यहाँ का हर आदमी अपने पुनर्जन्म को लेकर परेशान है। कवि 'मरे हुए लोग' शीर्षक कविता में लिखते हैं कि-

" मरे हुए लोगों के इस शहर में

हर आदमी अपने पुनर्जन्म को लेकर परेशान है

मरे हुए लोग

मरे हुए लोगों में शामिल नहीं हैं

उन्हें अपने मरने से परहेज है

जबकि न जाने कितने पहले वे मर चुके हैं

……

मरे हुए लोग

जीने की आशा लिये

लगातार मरते जा रहे हैं

अपनी सारी बरक्कत के बावजूद

इस पवित्र शहर में ! " [4]

वे कहते हैं कि, मनुष्य खुद को मरे हुए लोगों में बिल्कुल शामिल नहीं करना चाहता, जबकि अंदर से वो कब का मर चुका है। उसकी संवेदनाएं न जाने कब की दफन हो चुकी हैं। फिर भी उसे अपने पुनर्जन्म की चिंता है। और उस मर चुके संवेदनहीन मनुष्य की जीने की जिजीविषा अभी भी बरकरार है। आशय यह कि, ऐसे पवित्र शहर में मनुष्य जो मर चुका है, अभी भी वह जीने की उम्मीद नहीं छोड़ा है। अपनी तमाम बरक्कत के बावजूद भी वह लगातार मर रहा है इस पवित्र शहर में।

श्रीप्रकाश शुक्ल की 'मणिकर्णिका' शीर्षक कविता जीवन के अंतिम सत्य को प्रदर्शित करती है। मनुष्य के शरीर को मृत्तोपरान्त कैसे अग्नि के हवाले कर दिया जाता है, उस शरीर और उसके अन्तेष्टि के बारे में कवि लिखते हैं कि-

" देह जा रही है

अपनी गेह के पास

नहीं है यह नेह का विछोह

यह तो सस्नेह पंचभूतों से अभिसार है

....

मणिकर्णिके ! खुश रहना

तुम्हारे दहकने में एक देह कंचन हो रही है

इसे तुम अपना

नेह देना

हो सके तो

कर्णपूर शिवारूप

शान्ति देना !” [5]

‘मणिकर्णिका’ बनारस का एक ऐसा घाट जहाँ शादियों से चिता जलती आ रही है। बनारस के लोक और उसके शास्त्र में ‘मणिकर्णिका’ हमेशा आकर्षण का केन्द्र रही है। यहाँ आकर मनुष्य कुछ देर के लिए अपने दुख को भूल ही जाता है। यहाँ कवि ने मनुष्य के मृत शरीर को ‘मणिकर्णिका’ आने पर उसे उस मृत शरीर का घर कहा है। क्योंकि अंतिम में सब को यहीं आना है अर्थात मनुष्य का आखिरी घर यही है, जहाँ वह अपने सारे बंधनों को तोड़ कर पंचतत्व में विलीन हो जाता है। कवि यहाँ ‘मणिकर्णिका’ से अपील भी करता है, कि हे ‘मणिकर्णिका’! तुम खुश रहो, तुम्हारे दहकने में ही यह देह सोना हो रही है, और हो सके तो इसकी आत्मा को शान्ति प्रदान करना। यहाँ कवि ने मृत्यु और घाट के प्रति अपनी आस्था के जरिये जीवन और मृत्यु के बीच संवाद को स्थापित किया है।

श्रीप्रकाश शुक्ल द्वारा लिखी गयी बनारस संबंधित कविताओं में आख्यान परम्परा को भी देखा जा सकता है। देव दीपावली, गंगा दशहरा तथा हे महाश्मशान जैसी कविताएं इसका उदाहरण हैं। इसी परम्परा में उनकी ‘नागनथैया’ शीर्षक से दो कविताएं मिलती हैं। पहली ‘ओरहन तथा अन्य कविताएं’ तथा दूसरी ‘वाया नई सदी’ कविता संग्रह में संकलित हैं। ‘नागनथैया’ एक पर्व बनारस में मनाया जाता है। जो भारतीय मिथकीय परम्परा का जबरदस्त उदाहरण पेश करता है। इन कविताओं में आधुनिक सन्दर्भों के हवाले से लोक और शास्त्र को एक दूसरे के सम्मुख दिखाया गया है-

“पानी और गीला !

पानी तो गीला होता ही है एक लीला रसिक ने कहा

मैंने कहा आज पानी ठोस है साधो और इसके गीला होने की परीक्षा है

यह पानी के लीला की परीक्षा थी

कि पानी को आज गीला होना था

और लीला को ठोस

और बेहद ठोस !

यह कालिया नामक नाग के दमन का क्षण था ” [6]

यहाँ कवि ने पानी को गीला कहा, अर्थात भिगोये भी। कालिया नाग को एक विशाक्त की तरह प्रयोग किया है। ‘पानी ठोस है साधो’ उलटबाँसी के रूप में प्रयुक्त किया है। एक तरफ गीला तथा दूसरी तरफ ठोस के माध्यम से जड़ होती आस्थाओं को दिखाया है। वहीं दूसरी कविता में कवि ने एक कुत्ते के माध्यम से भरी हुई लीला के बीच कैसे वर्षों की परम्परा से एक कुत्ता टक्कर ले रहा था को दर्शाते हैं-

“लोग थे कि देख रहे थे लीला

लेकिन लीला थी कि अपरम्पार थी

कि कुछ भी दिख नहीं रहा था कहीं

जबकि बगल के नाले से सरककर आया हुआ एक कुत्ता

शहर के तमाम लीलाकुल 'लत्तों' के बीच

लगातार लगा रहा था चक्कर

और बाहर आने की सारी कवायद के बीच

मुँह उठाकर लगभग चार सौ वर्षों की लीला को ललकार रहा था” [7]

इस कविता में कैसे एक कुत्ता काशी की पुरोहिती में दखल अंदाजी करता है, और चार सौ वर्षों की परम्परा को चुनौती दे रहा होता है। उक्त दोनों कविताओं पर टिप्पणी करते हुए, आलोचक विंध्याचल यादव, चुनी हुई कविताओं की भूमिका में टिप्पणी करते हुए लिखते हैं कि, “यहाँ 'गीलेपन' को बड़ी कलात्मक से 'तरलता' से अलग अर्थ में प्रयोग

कर लिया गया है। पानी तरल तो होगा ही। तरलता उसका भौतिक गुण है। लेकिन वह गीला भी हो, यानी भिगोए भी, कविता में शर्त यह है। 'गीलापन' पानी का सांस्कृतिक गुण है। मिथकों के नये अर्थ संधान में शब्द प्रयोग की ऐसी बारीकी श्रीप्रकाश शुक्ल के यहाँ खूब है। यहाँ श्रीप्रकाश शुक्ल ने कालिया नाग को मनुष्यों के बीच बढ़ती विषाक्तता के रूपक में बदल दिया है और 'पानी ठोस है साधो' जैसी उलटबाँसी कहकर एक ओर लीला रसिकों के बीच ऐंठन भरे बातचीत के बनारसी अन्दाज को, तो दूसरी तरफ ठोस और उस होती आस्था व परम्पराओं की जड़ता को रेखांकित कर दिया है। दिलचस्प है कि इसी शीर्षक से एक दूसरी कविता 'वाया नई सदी' में भी है, जहाँ नागनथैया की पवित्र लीला के ठीक बीच अस्सी नाले से बहता हुआ एक मैला-कुचैला कुत्ता आ जाता है। यह काशी की पुरोहित परम्परा की पवित्रता में परम्परा बाह्य धारा की दखलअन्दाजी हुई और इस तरह यह कविता बनारस के लोक और शास्त्र के द्वंद्व की कविता में बदल गई है।" **8** उक्त टिप्पणी से दोनों कविताओं में उल्लिखित बनारस के लोक और शास्त्र की उधेड़बुन को समझ सकते हैं।

श्रीप्रकाश शुक्ल लोककथाओं और मिथकीय पृष्ठ भूमि के साथ ही बनारसी लोक के अति साधारण किरदारों पर भी कविताएं लिखी हैं। ऐसी कविताओं में महतरिया माई, चायवाला, पोइ भाई, धनावती देवी आदि हैं। 'पोइ भाई' शीर्षक से कवि ने जो कविता लिखी, वह अस्सी पर एक चाय विक्रेता को केंद्र में रख कर लिखी गयी कविता है। एक साधारण से चाय विक्रेता के माध्यम से कवि चाय पिने के पुरवे और पुरखे के सौजन्य से अपनी विस्मृत होती परम्परा की चिंता व्यक्त की है। वे लिखते हैं कि-

"पोई भाई
जरा गौर से इस आवाज को सुनें
यह पुरवों की चिन्ता करने से अधिक पुरखों पर चिन्तन करने का समय है
जो एक एक कर पराए हो रहे हैं
पूँजी के धराए हो रहे हैं!" [9]

कवि यहाँ पर उस पुरवे से ज्यादा पुरखे की चिंता व्यक्त करता है, चुँकि बढ़ता हुआ पूँजीवाद छोटे कामगारों और मजदूरों पर कैसे कहर बरपाया है, कवि इसी की चिंता करता है। अत्याधुनिक उपकरणों एवं मशीनीकरण के चलते

छोटे कामगारों के व्यवसाय पर बड़ा ही खतरा बढ़ा है, जिसके चलते अपने हाथों के हुनर के माहिर वे पुरखे आज बेहाल हैं, और लोग मशीनों के गुलाम बनते चले जा रहे हैं।

कोई कवि अपने समय में, उसके आस-पास हो रहे परिवर्तनों के प्रति अपनी सजगता को रेखांकित करता चलता है। जिसे वह अपनी लेखनी के माध्यम से दर्शाता चलता है। कवि श्रीप्रकाश शुक्ल में यह प्रतिभा विलक्षण रही है। कवि अपने प्रिय शहर में हो रहे परिवर्तनों के प्रति सदैव सचेत दिखलाई पड़ता है। बड़ी बात यह है कि, सिर्फ परिवर्तन को नहीं देखता, बल्कि जिस वस्तु/स्थान में परिवर्तन हो रहा होता है, उसकी समूची परम्परा का अवलोकन करते हुए, उसे अपने समय के यथार्थ से भी जोड़ता है। कवि का काव्य-संग्रह 'क्षीर सागर में नींद' में बनारस के एक मोहल्ले 'पक्का महाल' शीर्षक कविताओं में विकासवादी अवधारणाओं के नाम से हो रहे परिवर्तनों को दर्शाया है। 'पक्का महाल' बनारस का वह क्षेत्र है, जहाँ सकरी गलियाँ, सटे हुए घर और तमाम मन्दिर एक में ही गुथे हुए हैं। जब विकासवाद और शहरीकरण के नाम पर प्रशासन द्वारा इन मकानों को बुलडोजर द्वारा तोड़ा जा रहा था, उस समय एक कवि की संवेदनायें अपने प्रिय शहर के सांस्कृतिक ध्वस्तिकरण होने के कारण उस दर्द को अपनी कविताओं में दर्ज करता है। और इन कविताओं के माध्यम से चीखता है। कैसे एक मन्दिर के परिसर को बड़ा करने के लिए उसके पास के तामाम घर और छोटे मन्दिरों को तोड़ दिया जाता है? इस पर कवि कहता है-

"यह शिव की मुक्ति का अद्भुत समारोह है
कि एक मुक्तिधाम विकसित हो रहा है
सैकड़ों 'घर-धाम' को ध्वस्त करता हुआ !" [10]

'पक्का महाल में जेसीबी' शीर्षक कविता में कवि ने ध्वस्तीकरण हेतु आई जेसीबी के माध्यम से वहाँ के लोगों के कुछ संवाद को अपनी कविता में दर्ज किया है। जेसीबी के आने के संबंध में लोगों के अपने तर्क हैं, किन्तु कवि की चिन्ता, ध्वस्त होती सभ्यता और समूची संस्कृति की है। वे लिखते हैं कि-

"कुछ का कहना है कि यहाँ के लोगों ने खुद इसे बुलाया
जो खुद ही खुद की हवा, पानी व नमी से ऊब चुके थे
और खुद ब खुद यहाँ की गलियों से निकल कर
एक चौड़े मैदान में चहकना चाह रहे थे !

....

चलते-चलते कुछ का यह भी कहना था कि यहाँ एक बिग बाज़ार होगा

जहाँ सब तरह की सामग्री सब प्रकार के दामों में उपलब्ध होगी

और पूजा की दिव्य सामग्री व शव पार्लर के साथ

एक भव्य पंडितालय भी होगा

जिसकी एक ढलान मंदिर की ओर होगी

तो दूसरी मणिकर्णिका की ओर !

....

अपनी तमाम सभ्यतागत बहसों के बावजूद

न तो गंगा निहार पाएँगी अपने जटाधारी शिव को

और न शिव ही अपनी तन्वंगी गंगा को निरखने की स्थिति में हैं!" [11]

कविता स्पष्ट शब्दों में इस बात को इंगित कर रही है कि, जो जगहें तोड़कर खाली कराई जा रही हैं, वहाँ पर बड़े-बड़े पूँजीपतियों का बोलबाला होगा, उनके मॉल खुलेंगे और वही कीमतें तय करेंगे। कवि की चिन्ता सभ्यता की चिन्ता है, छोटी-छोटी गलतियों छोटी दुकानों से ढके शिव के प्रांगड़ को विस्तृत करने की होड़ में अपनी सभ्यता पर ही जेसीबी को दौड़ाया जा रहा है।

'सुबह-ए-बनारस' शीर्षक कविता में कवि ने बनारस में प्रातः काल हो रही उस गंगा आरती का जिक्र किया है, जो वर्षों से अनवत रूप से होती आ रही है। इस कविता में कवि ने बनारस का वर्णन कुछ शास्त्रीय मान्यताओं के हवाले से भी किया है। सुबह-बनारस को कवि ने 'रथनाभौ' अर्थात काशी की धुरी कहा है। यह 'रथनाभौ' शब्द प्रश्नोपनिषद से लिया गया है। पूरी कविता में कवि ने रात्रि का वह दृश्य खींचा है जहाँ गंगा की बहती धारा के सम्मुख धू-धू कर जलती चिताओं से होते हुए मतवाली सुबह के तमाम बिम्बों के सहारे एक सजीव चित्र रेखांकित किया है-

"सुबह-बनारस है रथनाभौ

बसे जहाँ रयि प्राण परम हर

पितर देव गंधर्व विहँसते

मुदित मेघ

मघवान' मनोहर

गंगा की धारा पवित्र है

जनरव की है बात निराली

रात जहाँ धू-धू कर जलती

प्रातः की बात है

मतवाली

………..

दुर्लभ है दुनिया में काशी

काशी में दुर्लभ गंगा तट

सुबह बनारस शाम घाट पर

व्योम विहँसता

धरती से सट

हर घाट यहाँ अब मन्दिर है

कुंकुम चन्दन का मेला है

वैदिक मंत्रों से घिरा फिरा पर

मन से

बहुत अकेला है

गंगा की धारा पवित्र है

फिर भी उजला काला है

आँखों में जो बसी सुबह है

उसमें सतरंगी

जाला है!” [12]

निष्कर्ष:-

इस प्रकार हम यह देखते हैं कि श्रीप्रकाश शुक्ल की कविताओं में बनारस एक केन्द्रीय विषय है। लंबे समय तक बनारस में निवास करते हुए कवि ने शहर के विभिन्न प्रसंगों को अपनी कविता का आधार बनाया। उनकी रचनाओं में गंगा, घाट, मन्दिर, त्यौहार, उत्सव और मेले सभी विद्यमान हैं। हालांकि, कवि बनारस के सांस्कृतिक वर्णन के साथ-साथ उसके समकालीन अंतर्विरोधों को भी अपनी कविताओं में दर्ज करते हैं। इसी कारण उनकी भाषा कभी-कभी थोड़ी 'क्रिटिकल' (आलोचनात्मक) हो जाती है। वे बनारस के हिंदू रीति-रिवाजों, मेलों और त्योहारों पर लिखते समय कभी भी भजन-पूजन या महिमा मंडन में नहीं उलझते। इसके विपरीत, उनकी दृष्टि सदैव लोक पक्ष पर टिकी रहती है, जिसके कारण उनकी कविताएँ शास्त्रों से एक संघर्ष करती हुई दिखती हैं। कवि ने अपनी कविताओं में जनपदीय भाषाओं का प्रभावी प्रयोग किया है। बनारस से जुड़ी छोटी सी जगह, कोई लोक नायक, अथवा कोई अतिसाधारण किरदार हो—कवि ने इन सभी को भी अपनी कविता में स्थान दिया है। कवि अपने प्रिय शहर में विकासवादी अवधारणाओं के नाम पर हो रहे परिवर्तनों को बड़ी बारीकी से रेखांकित करते हैं। कवि इस बात की पुरजोर चिंता दर्ज करते हैं कि इन परिवर्तनों के नाम पर कैसे पूँजीवादी ताकतें मॉल और बड़े-बड़े रेस्टोरेंट के माध्यम से अपने पैर पसार रही हैं। इसके फलस्वरूप छोटे व्यापारी कैसे अपनी आजीविका खो बैठते हैं, इस पीड़ा को भी कवि ने अपनी कविताओं में व्यक्त किया है। एक तरह से, बनारस श्रीप्रकाश शुक्ल की कविताओं में सार तत्व के रूप में समाया हुआ है, मानो कवि की कविताई और बनारस एक-दूसरे के पूरक हों।

सन्दर्भ सूची-

1. शुक्ल, श्रीप्रकाश (2019). क्षीर सागर में नींद. सेतु प्रकाशन, पृष्ठ. 92-93.
2. वर्मा, कमलेश (सम्पा.) (2024). असहमतियों के वैभव के कवि श्रीप्रकाश शुक्ल., वाग्देवी प्रकाशन, पृष्ठ. 330

3. यादव, विंध्याचल (सम्पा.) (2025). झुकना किसी को रोपना है (चुनी हुई कविताएं, श्रीप्रकाश शुक्ल), राधाकृष्ण पेपर बैक, पृष्ठ. 87.
4. शुक्ल, श्रीप्रकाश (2014). ओरहन तथा अन्य कविताएं., नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, पृष्ठ. 107-108.
5. शुक्ल, श्रीप्रकाश (2022). वाया नई सदी. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, पृष्ठ. 91-92.
6. शुक्ल, श्रीप्रकाश (2014). ओरहन तथा अन्य कविताएं., नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, पृष्ठ.160
7. शुक्ल, श्रीप्रकाश (2022). वाया नई सदी. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, पृष्ठ. 94
8. यादव, विंध्याचल (सम्पा.) (2025). झुकना किसी को रोपना है (चुनी हुई कविताएं, श्रीप्रकाश शुक्ल), राधाकृष्ण पेपर बैक, पृष्ठ. 7
9. शुक्ल, श्रीप्रकाश (2019). क्षीर सागर में नींद. सेतु प्रकाशन, पृष्ठ. 74
10. वही, पृष्ठ. 99
11. वही, पृष्ठ. 100-101
12. शुक्ल, श्रीप्रकाश (2022). वाया नई सदी. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, पृष्ठ. 99-100-101